गुरु पूर्णिमा विशेष - तुलसी जयन्ती

रामचरित मानस में गुरु महिमा

(बालकाण्ड)

रमाशंकर गौड़

भारतीय जनमानस में राम शब्द की अवधारणा की इतनी गहरी पैंठ है कि लोग अभिवादन में भी ''जय रामजी'' बोलते रहे हैं। वर्तमान में भी ''राधे-राधे'', जयश्री कृष्णा'' के प्रचलन में अधिक 'जय सियाराम' एवं 'जय श्री राम' का उच्चारण हर ओर सुनाई देता है। रामकथा हर हिन्दू की प्रिय कथावस्तु रही है और युगान्तर से ''रामलीला'' मनोरंजन के अतिरिक्त धार्मिक आस्था एवं श्रद्धा का स्थान लिये जन-जन में पल्लवित है। धार्मिक ग्रन्थ के रूप में रामचरितमानस जिसे प्रचलन में ''रामायण'' भी कहते हैं, को हर हिन्दू के अतिरिक्त अन्य सम्प्रदायों में भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

आदिकवि वाल्मिकि की संस्कृत में निबद्ध रचना ''रामायण'' कालान्तर में गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज की तत्कालीन जन भाषा में ''रामचरितमानस'' के रूप में प्रतिष्ठित हुई। सप्त सोपान (काण्ड) में निगूढ इस रचना महाकाव्य में महाकवि ने राम रूप की परिकल्पना को जीवन्त किया है, आपाद मस्तक तक-

बालकाण्ड प्रमु पाँय, अयोध्या कटि मन मोहे।
उदरबन्यो आरण्डय, हृदय किष्किन्धा सोहे।।

सुन्दर ग्रीवि मुदार, मुख लंका कह गायो।
जिन्हे में रावण औरू निसाचर सभी समायो।।

उत्तर मष्तक जान हरि, यह विधि तुलसीदास भणु।
आदि अंत लों देखिये, श्री रामायण राम तनु।।

साढ़े पाँच वर्ष के अनाथ बालक को गुरू नरहरि दास (नरहर्यानन्द) स्वामी ने ''रामबोला'' नाम दिया, यज्ञोपवित संस्कार कराया, राममंत्र की दीक्षा दी, रामचरित्र सुनाया ग्राम राजापुर (जिला बाँदा-निकट प्रयाग) के सरयूपारीय ब्राह्मण आत्माराम दुबे व तुलसी के श्रावण शुक्ला सप्तमी सं. १५५४ को जिस विचित्र बालक ने मूल नक्षत्र में जन्म लिया, पिता के उदासीन हो मुख फेरने और तुलसी माता द्वारा दसमी को दासी के साथ बालक को भेजते ही देहान्त हो जाने पर, पुनः साढ़े पाँच वर्ष उपरान्त दासी / घाय माँ चुनिया की मृत्यु के उपरान्त नितान्त अनाथ हो गया उसे गुरूओं का प्रबल आशीर्वाद प्राप्त हुआ।

गुरु शेष सनातन जी ने, काशी में उन्हें वेद-वेदांग का अध्ययन करा ''तुलसी'' बनाया, वे तुलसीदास गुरू की महिमा का बखान कैसे नहीं करते ? बालकाण्ड के मंगला चरण में प्रथमत: ''वन्दे वाणी विनायको'' के उपरान्त भवानीशंकर में पुन: शंकर की नित्य गुरूरूप में वन्दना की गई ।

वन्दे वोधमयं नित्यं गुरू शङ्कररूपिणम्।
यमाश्रितों हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।।३।।

ज्ञानमय, नित्य, शंकर रूपी गुरू की मैं वंदना करता हूँ जिनके आश्रित होने से ही टेडा चन्द्रमा भी सर्वत्र वन्दित होता है (यहाँ वक्र चन्द्र में भी गूढ़ार्थ निहित है) वेदों ने भी शिव को तीनो लोकों का गुरू कहा है-

तुम त्रिभुवन गुरवेद बरवाना। आन जीव पाँवर का जाना।। .....

स्वान्त: सुखाय, नाना पुराण निगम-आगम (वेद-शास्त्र) सम्मत रघुनाथ की गाथा मनोहर भाषा में वे गुरू की इस प्रकार वन्दना करते हैं-

बंदऊँ गुरू पदकंज, कृपा सिंन्धु 'नररूप हरि'।
महामोह तम पुंज, जासु वचन रविकर निकर।।५।।

महाकवि ने आलंकारिक माध्यम से अपने गुरू का स्मरण कर लिया है । पुन:-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा। सुरूचि सुवास सरस अनुरागा।।

रामचरित्र रूपी मणि-माणिक्य, गुप्त रूप से प्रकट करने के लिए, हृदय के निर्मल नेत्र खोलने वाले, अज्ञान अन्धकार नाशक गुरू दिव्य दृष्टि दायक है:-

श्री गुर पद नख मनि गन जोति। सुमिरत दिव्य दृष्टि हियँ होती।।
दलन मोह तम सो सप्रकासू। बड़े भाग उर आवाई जासू।।१(३)

''बंदऊँ प्रथम महीसुर चरना'' से पूर्व संसार रूपी बन्धन से छुड़ाने वाले श्रीराम के चरित्र के वर्णन हेतु, विवेक नेत्रों के लिये वे गुरू चरणों का इस प्रकार आभार व्यक्त करते हैं:-

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन। नयर अमिअ दृग दोष विभंजन।।
तेही कर विमल बिबेक बिलोचन। बरनऊँ रामचरित भवमोचन।।२(१)

तुलसी वाल्मीकि ऋषि की वन्दना से भी नहीं चूके और अपने प्रिय रामभक्त महावीर की वन्दना भी नहीं भूले:-

बंदऊँ मुनि पद कंजु, रामायन जेहिं निरमयउ।
सखर सुकोमल मंजु, दोष रहित दूषण सहित।। ४ (घ)

प्रनवऊँ पवन कुमार, खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार, बसहिं राम सर चाप घर ।।(१७)

चैत्र नवमी मंगलवार संवत १६३१ में अयोध्या में रामकथा आरम्भ में वे समस्त जन की वन्दनोपरान्त पुन: गुरू को स्मरण करते हैं:-

एहि विधि सब संसय करि दूरी। सिरधरि गुरपद पंकज धूरी।
पुनि सबहि बिनवऊँ कर जोरी। करत कथा नही लाग न धोरी।।(३४)

तुलसी 'मानस' में रामकथा के प्रथम वक्ता, उदघोषक रूप में भगवान शंकर को पाते हैं, अगस्त्य ऋषि से सुनने के बाद जिन्होने हिमतनया एवं काग भुशुण्डि को कथा सुनाई। काग भुशुण्डि से परमज्ञानी याज्ञवल्क्य जी ने सुनी। प्रयाग में कुम्भ पर्व पर मुनि भरद्वाज ने गुरू याज्ञवल्क्य को रोक कर, पूजा अर्चना कर, पाँव पकड़ कर रामकथा सुनाने का आग्रह कितने विनीत शब्दों में किया -

संत कहहिं असि नीति प्रभु श्रुति पुरान मुनि गाव।
होई न बिमल बिबेक उर गुर सन किए दुराव।।४५।।

गुरू के साथ दुराव/छिपाव करने से हृदय में निर्मल ज्ञान नहीं होता ऐसा वेद -पुराण तथा मुनिजन बताते हैं, सन्तों की भी ऐसी नीति कही गई है। अत:-

अस विचारि प्रगटउँ निज मोहू। हरहु नाथ करि जन पर छोहू।।४६।।

गुरू के प्रभाव से शिष्य को इसमें इतना रच बस जाना होता है कि उसे वह अपना ही घर लगे और अपने घर में जाने के लिए क्या आमन्त्रण:-

जदपि मित्र प्रभु पितु गुर गेहा। जाइअ बिन बोलेहुँ न सँदेहा।।६२(३)

अपने संदेह, अपनी शंका-समाधान के लिए निर्बाध रूप से गुरू गृह चले जाना ही श्रेयस्कर है गुरू सदैव शिष्य का भला ही चाहता है, उनकी हर बात को शुभ ही समझना चाहिए

मात पिता गुर प्रभु कै बानी। बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी।।७७(२)

जैसे माता पिता और स्वामी-प्रभु अपने बच्चे का ध्यान रखते हैं उसी प्रकार गुरू भी शिष्य का मंगल-सुमंगल चाहते हैं।

गुरू की सेवा सब करते हैं चाहे वह राजा ही क्यों न हो:-

गुर सुर संत पितर महिदेवा। करइ सदा नृप सबकै सेवा।।१५५(२)

और गुरू के क्रोध के लिए 'मानस' में कहा गया है:-

सत्य नाथ पद गहि नृप भाषा। हिज गुर को कहहु को राखा।।
राखइ गुर जौं कोप विधाता। गुर विरोध नहिं कोउ जग त्राता।।१६६

किन्तु राक्षसी प्रवृत्ति के लोगों के लिए गुरू का कोई महत्त्व ही नहीं होता।

शुभ आरचन कतहुँ नहिं होई। देव विप्र गुरू मान न कोई ।।१८३(४)

जो बात आप किसी से उजागर कर नहीं सकते वह गुरू को कही जाकर उसका समाधान गुरू द्वारा हो जाता है। महाराज दशरथ ने भी पुत्र न होने पर गुरू वशिष्ठ से समाधान पाया:-

एक बार भूपति मन माहीं। मैं गलानि मोरे सुत नाहीं।।
गुर गृह गयउ तुरत महिपाला। चरन लागि करि विनय बिसाला।।१८९

और पुत्र जन्म के उपरान्त ''**गुर वशिष्ठ कहँ गयउ हँकारा।**

तो नामकरण संस्कार बिन गुरू के कैसे न होता :-

धरे नाम गुर हदयँ बिचारी। वेद तत्व नृप तब सुत चारी।।१९८

इस प्रकार महाकवि महान सन्त तुलसीदास जी महाराज ने यह गुरूमहिमा वर्णित की उसे बालकाण्ड में रामजन्म से लेकर विवाह प्रकरण तक निरन्तर निर्वहन किया है जिसका विवरण पृथक लेख है।

दुग्धेन धेनुः कुसुमेन वल्ली शीलेन भार्यां कमलेन तोयम्।
गुरूं बिना भाति न न्येव शिष्यः शमेन विद्या नगरी जनेन।।

।।ओउम् गुरूवे नमः।।